वैदिक व्याख्यान माला — ३० वाँ व्याख्यान

वैदिक समयकी सेनाव्यवस्था

लेखक

पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

अध्यक्ष- स्वाध्याय-मण्डल, साहित्यवाचस्पति, गीतालंकार

स्वाध्याय—मण्डल, पारडी (सूरत)

मूल्य छः आने

ॐ

वैदिक समयकी सेनाव्यवस्था

वैदिक समयके आर्योंमें हम देखते हैं कि उनमें राज्य-शासनके कई प्रकार वर्णन किये हैं, देखिये—

साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यं आधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् ॥ ऐ० ब्रा०

(१) साम्राज्य, (२) भौज्य, (३) स्वराज्य, (४) वैराज्य, (५) पारमेष्ठ्य राज्य, (६) महाराज्य, (७) आधिपत्यमय, (८) सामन्तपर्यायी, (९) राज्य ऐसे नाम ऐतरेय ब्राह्मणमें आ गये हैं। इन शासनोंमें क्या भेद है इसका विचार हम यहां करना नहीं चाहते, पर इतने शासनोंके प्रकार वैदिक समयमें थे इसमें संदेह नहीं है। और जिस कारण इतने विभिन्न नामके शासन थे, उसी कारण इस प्रत्येकमें कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य ही होगी, नहीं तो भिन्न भिन्न नाम रखनेका प्रयोजन भी सिद्ध नहीं हो सकता। इस कारण इतने विभिन्न शासन उस समय थे ऐसा ही मानना उचित है। और भी कुछ राज्यशासनोंके नाम आये हैं। जैसा—(१०) जानराज्य, (११) विप्रराज्य, (१२) समर्य-राज्य इत्यादि।

इतने विविध प्रकारके अनेक राज्य होनेके कारण शासन-व्यवस्थाके लिये आधार जो सैन्यकी व्यवस्था है, वह तो होनी ही चाहिये। यदि राज्यमें सैन्य न रहा, तो राज्य टिकेगा कैसे? शत्रुका आक्रमण होनेपर सेनासे ही शत्रुका पराभव किया जा सकता है। सैन्य न रहा तो परास्त होना पडेगा, और परास्त होनेपर न तो स्थानपर स्वराज्य रहेगा और न साम्राज्य। इसलिये हमें यहां देखना है कि वैदिक समयकी राज्यशासन व्यवस्थामें सैन्यकी व्यवस्था थी या नहीं थी, और थी तो कैसी थी।

राज्यशासनमें अनेक प्रकारकी शासनतंत्रकी व्यवस्थाएं होती हैं, आन्तरिक शासन, करव्यवस्था, न्यायप्रदानकी व्यवस्था, ग्रामव्यवस्था आदि अनेक प्रकारकी व्यवस्थाएं होती ही हैं। पर हम इन सब व्यवस्थाओंका विचार यहां नहीं करेंगे। हम यहां केवल "सेनाकी व्यवस्था" कैसी थी इसीका विचार करेंगे।

सेनाकी आवश्यकता

शूरा इव इत् युयुधयः न जग्मयः
श्रवस्यवः न पृतनासु येतिरे।
भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यः
राजान इव त्वेषसंदृशो नरः ॥ ऋ. १।८५।८

(शूरा इव) शूरोंके समान युद्ध करनेवाले, (युयुधयः न जग्मयः) योद्धाओंके समान शत्रूपर आक्रमण करनेवाले, (श्रवस्यवः न पृतनासु येतिरे) यश प्राप्त करनेवाले वीरोंके समान सैन्योंमें पुरुषार्थका प्रयत्न करते हैं। इन वीरोंको देखकर (विश्वा भुवनानि भयन्ते) सब भुवन, सब प्राणी भयभीत होते हैं, ये (राजान इव) राजाओंके समान (त्वेष-संदृशः) तेजस्वी दीखते हैं।

इस मंत्रमें सैन्यवाचक 'पृतना' यह शब्द है। ये वीर सेनामें रहते हैं और वीरताके कार्य करते हैं। यहां वीर-पुरुषोंकी सेना होती है ऐसा कहा है तथा—

सं यद् हनन्त मन्युभिर्जनासः।
शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु।
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासः
त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः ॥ ऋ. ७।५६।२२

हे महावीर श्रेष्ठ वीरो ! जब तुम्हारे (शूरा जनासः) शूर पुरुष (यह्वीषु) नदियोंमें (ओषधीषु) झाडियोंमें अथवा (विक्षु) प्रजाजनोंमें रहकर (मन्युभिः) उत्साहसे शत्रुपर (सं हनन्त) मिलकर हमला करते हैं उस समय (पृतनासु) सेनाविभागोंमें रहनेवाले तुम सब वीर (नः त्रातारः भूत) हमारा संरक्षण करनेवाले बनो।

इस मंत्र 'पृतना' पद सेना पथकोंका वाचक है और ये वीर इन सेना पथकोंमें रहकर संघसे शत्रुपर आक्रमण करते हैं और शत्रुका नाश करते हैं ऐसा कहा है। यह वैयक्तिक युद्ध नहीं है पर सेनाके पथकोंका संघ युद्ध है। व्यक्तिशः युद्ध करना और बात है और संघशः हमला करना और बात है। इस मंत्रमें 'सं हनन्त' मिलकर एक होकर शत्रुपर आक्रण करनेका भाव स्पष्ट है। सेना है और सेनाके सब वीरोंका इकट्ठा शत्रुपर हमला होनेकी कल्पना जो इस मंत्रमें है वह विशेष देखनेयोग्य है। तथा—

मरुद्भिः उग्रः पृतनासु साळ्हा
मरुद्भिः उग्रः इत् सनिता वाजमर्वा ॥ ऋ.७।५६।२३

(मरुद्भिः) वीरोंके साथ रहनेवाला वीर (पृतनासु) सेनाओंमें (उग्रः) शूरवीर होता है और (साळ्हा) शत्रुका पराभव करनेवाला भी होता है। सेनाके साथ रहनेसे साधारण मनुष्य भी उग्र शूरवीर बनता है और, शत्रुका पराभव करनेमें समर्थ होता है। अनुशासनमें रहनेका यह प्रभाव है। सेनाकी शिक्षासे ऐसा प्रभाव होता है यह वैदिक राष्ट्रवादियोंको ज्ञात था। अनुशासनयुक्त सेनाका महत्व वे जानते थे यह इससे सिद्ध होता है। तथा—

नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति
यस्मा अराध्वं नरः ॥ ऋ. ७।५९।४

हे (नरः) नेता वीरो ! (यस्मै अराध्वं) जिसके लिये तुम सहायक होते हैं उसके लिये (वः ऊती) आपकी संरक्षणकी शक्ति (पृतनासु नहि मर्धति) सेनाओंमें रहनेके कारण कम नहीं होती। संघमें रहनेसे मनुष्यकी शक्ति बढती है। सेनाका यह लाभ वेदमंत्रोंमें स्पष्ट किया गया है। तथा और देखिये—

तिग्ममनीकं विदितं सहस्वत्
मारुतं शर्धः पृतनासु उग्रम् ॥ अथर्व. ४।२७।७

(तिग्मं) प्रखर (सहस्वत्) शत्रुका पराभव करनेवाला तुम्हारा (अनीकं विदितं) सेनाका प्रभाव सबको विदित है। वह (मारुतं शर्धः) वीरोंका बल (पृतनासु उग्रं) सेनाओंमें अथवा सेनाओंके संघर्षोंमें बडा उग्र दीखता है।

इस मंत्रमें 'अनीकं' तथा 'पृतना' ये दो पद वीरोंकी सेनाके वाचक हैं। सेनामें वीरोंका बल बढ जाता है यह बात इन मंत्रोंसे स्पष्ट हो जाती है। अकेला अकेला वीर पृथक् पृथक् रहकर जितना पराक्रम कर सकता है, उससे अत्यंत अधिक वीरता वही वीर सेनाविभागके साथ रहकर बता सकता है यह इसका तात्पर्य है।

अनीक = सेनापथक

इस विषयके ये मंत्र देखिये, इनमें सेनाके पथकोंका प्रभाव वर्णन किया है–

असूत पृश्निर्महते रणाय
त्वेषमयासां मरुतामनीकम् ।
ते सप्सरासोऽजनयन्ताभ्वं
आदित्स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ॥

ऋ. १।१६८।९

(पृश्निः) मातृभूमिने (महते रणाय) बडे युद्धके लिये (अयासां मरुतां) शत्रुपर हमला करनेवाले सैनिकोंका (त्वेषं अनीकं) तेजस्वी सेनापथक (असूत) निर्माण किया है। (ते) वे सैनिक (अप्-सरासः) संघ करके हमला करनेवाले वीर (अभ्वं अजनयन्त) बडा सामर्थ्य प्रकट करते हैं और (इषिरां स्व-धां) अन्न देनेवाली स्वकीय धारक शक्तिको उन्होंने (आत् इत् पर्यपश्यन्), सर्वत्र देखा। सर्वत्र अपनी शक्ति कार्य कर रही है ऐसा उन्होंने देखा।

यहां 'अनीक' पद सेनावाचक है और इस तरह सेनापथकोंमें रहनेवाले वीर कैसा विलक्षण सामर्थ्य प्रकट करते हैं यह भी इस मंत्रने बताया है। तथा—

अनीकेषु अधि श्रियः । ऋ. ८।२०।१२

'सेनापथकोंमें ये वीर विजयश्री प्राप्त करते हैं।' सेनाके पथकोंमें रहनेवाले और कार्य करनेवाले वीर अधिक वीरता बताते हैं यह इसका तात्पर्य है।

इस तरह सेना, सैन्य, सेनापथक आदिके वाचक पद वेदमंत्रोंमें हैं। राज्यशासनके अनेक प्रकार थे, राज्य

संरक्षणके लिये सेना थी, तथा सेनामें रहनेवाले सैनिक विशेष शूरता प्रकट करते थे आदि वर्णन देखनेसे अत्यंत स्पष्टतासे यह प्रकट होता है कि वैदिक समयमें सेना-रचनाकी अच्छी कल्पना व्यवहारमें आ गयी थी।

सेनाकी कल्पना

प्रथम हम देखेंगे कि वेदमें 'सेनाकी कल्पना' है या नहीं? तो हमें वेदमें सेनाकी कल्पना है ऐसा स्पष्ट दीखता है, देखिये—

असौ या सेना मरुतः परेषां
अस्मानेत्यभ्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसाऽपव्रतेन
यथैषामन्यो अन्यं न जानात्। अथर्व ३।२।६

"हे मरुतो! यह जो शत्रुकी सेना बडे जोरसे स्पर्धा करती हुई हमारे ऊपर आक्रमण करके आ रही है, उस सेनाको अपव्रत-तमसास्त्रसे वींधो और उस शत्रुसेनामेंसे एक वीर दूसरेको पहचान न सके ऐसा करो।"

यहां शत्रुकी सेना है, हमारी सेना है। शत्रुकी सेना बडे जोरसे हमारे उपर आक्रमण करके आ रही है, उस शत्रुकी सेनाको अपव्रत तमसास्त्रसे वींधना और उस शत्रुसेनामें ऐसी खिलबिली मचाना कि उनमेंसे एक भी सैनिक दूसरे सैनिकको न पहचान सके।

इस वर्णनमें स्पष्ट अपनी सेना, शत्रुकी सेना, उनका परस्पर आक्रमण और तमसास्त्रका प्रयोग और उससे शत्रुसेनामें गडबड मचाना आदि बातें हैं। इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक समयके राष्ट्रशासनके प्रबंधमें सेनाका प्रबंध अच्छा था।

अपव्रत तमसास्त्र

अपव्रत-तमसास्त्र एक अस्त्र है कि जो शत्रुसेनापर फेंकनेसे उनमें ऐसी गडबडी मचा जाती है कि जिससे एक सैनिक दूसरेको नहीं पहचान सकता। 'तमसास्त्र या धूम्रास्त्र' ही एक प्रकारका अस्त्र है। इस मंत्रसे ज्ञात होता है कि शस्त्रास्त्रसे सुसज्जित अपनी सेना रखनी चाहिये। शत्रुसेनाकी अपेक्षा अपनी सेना अधिक सुसज्जित रहनी चाहिये। और देखिये—

इन्द्रः सेनां मोहयतु मरुतः घ्नन्तु ओजसा।
चक्षुष्यग्निरादत्तां पुनरेतु पराजिता॥ अथर्व. ३।१।६

*

"इन्द्र शत्रुकी सेनाको मोहित करे, शत्रुकी सेना मोहित होनेपर उसका वध मरुत करें, शत्रुकी सेनाकी दृष्टि अग्नि दूर करे, फिर वह शत्रुकी सेना पराजित होती हुई वापस फिरे।"

इस तरह शत्रुसेनाको मोहित करना, पश्चात् उसकी कतल करना, शत्रुसेनाको कुछ भी न दीखे ऐसा करना और इस तरह कुण्ठित गति करके शत्रुसेनाका पूर्ण पराजय करना इस मंत्रमें लिखा है। यहां युद्ध करनेकी युक्तियां भी हैं। इस कारण वैदिक समयमें सैन्य थे, सैनिकोंका संचालन भी था। युद्धकी नाना युक्तियां भी थीं, और उनके प्रयोगसे शत्रुका पराजय करनेका साहस भी था। तथा—

सेनाजिच्च सुषेणश्च।
अन्तिमित्रश्च दूरेऽमित्रश्च गणः॥
वा. यजु.।१७।८२

'शत्रुकी सेनाका पराभव करनेवाला, उत्तम सेना अपने-पास रखनेवाला, अपने मित्रोंको समीप रखनेवाला और अपने शत्रुको दूर रखनेवाला। यह सब गणके साथ, संघके साथ होता है।' इस मंत्रसे सैन्यसे क्या क्या कार्य किये जाते हैं इसका बोध होता है। और देखिये—

ते इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके। अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिरामवत्सु तस्थौ न रोकः॥ ऋ. ६।६६।६

(ते) वे सैनिक (उग्राः) उग्र हैं और (शवसा धृष्णु-सेनाः) अपने बलसे साहसी सैन्यसे युक्त हैं। ये पृथिवी और आकाशमें (युजन्त इत्) अपने कार्यसे संयुक्त रहते हैं, अर्थात् युद्धकर्ममें दक्ष रहते हैं। इन वीरोंके (स्वशोचिः) अपने तेजके साथ (अमवत्सु) रहनेसे पृथिवी और आकाशमें कोई (रोकः न तस्थौ) प्रतिबंध नहीं रहता।" अर्थात् ऐसे शूर सैनिक रहनेपर उस राष्ट्रकी प्रगतिमें कोई किसी तरहका प्रतिबंध नहीं खडा रह सकता। प्रतिबंध उत्पन्न हुआ तो उसको ये सैनिक दूर करते हैं।

इतने मंत्रोंके विचारसे यह सिद्ध हुआ कि वैदिक समयकी राज्यशासनव्यवस्थामें—

१ सैन्यकी व्यवस्था थी,
२ संघसे सैन्यरचना होती थी, एक एक सैनिक नहीं होता था, पर संघकी रचनासे सैन्य रचना थी,

६ शत्रुसेनासे अपने सैन्यकी सुसज्जता अधिक रखी जाती थी,
४ अपनी सेना अच्छी रही तो अपनी प्रगतिमें रोक उत्पन्न करनेवाला कोई नहीं होगा ' ऐसा विचार उस समय था,
५ अपनी सेना उत्तम रहनी चाहिये,
६ अपने मित्रोंको पास रखना चाहिये,
७ अपने शत्रुओंको दूर रखना चाहिये,
८ शत्रुसेनाको मोहित करके प्रश्चात् उसकी कतल करना,
९ तमसास्त्रसे शत्रुको परास्त करना,
१० अपने सैनिक उग्र होने चाहिये ऐसा प्रबंध करना।

ये बातें यहां इन मंत्रोंमें दीखती हैं। इससे सेना राष्ट्र-रक्षणके लिये रहनी चाहिये यह वैदिक समयमें दृढ विचार था, सेना रखी जाती थी और अच्छी सुसज्ज सेना रखी जाती थी। इतना सिद्ध होनेपर हम अब विचार करेंगे कि सैनिक कैसे होने चाहिये—

युद्धकी संभावना

जहां युद्धकी संभावना होती है वहां सेनाकी तैयारी रखना अत्यावश्यक होता है। वैदिक सभ्यता विश्वशान्ति स्थापन करनेवाली सभ्यता है इसमें संदेह नहीं है, तथापि मनुष्योंमें राक्षसी प्रवृत्तियोंके मनुष्य होते हैं, उनके द्वारा जनताको उपद्रव होते हैं। इनको प्रतिबंध करके जनताको सुखी करना राज्यशासनका मुख्य कार्य है। ऐसी परिस्थितिमें राष्ट्रमें सेनाकी आवश्यकता है। अतः इस विषयमें वेदका कथन क्या है इसका यहां विचार करना चाहिये।

त्वां जना ममसत्येष्विन्द्र
सन्तस्थाना विह्वयन्ते समीके। ऋ. १०।४२।४

(मम-सत्येषु) मेरा पक्ष सत्य है ऐसा आग्रह जहां होता है वहां युद्ध होता है। ऐसे युद्धोंके प्रसंग उत्पन्न होने पर हे (इन्द्र) प्रभो! (जनाः त्वां विह्वयन्ते) तुम्हें बुलाते हैं। इसी तरह (समीके संतस्थाना) युद्धमें खडे रहे वीर भी तुम्हें अपनी सहायतार्थ बुलाते हैं।

इस मन्त्रमें ' मम-सत्यं ' यह युद्धका नाम है। युद्धके इस नामसे एक बडा भारी सिद्धान्त वेदने प्रकट किया है, वह यह कि (मम सत्यं) " मेरा कहना ही सत्य है " ऐसा दोनों पक्ष कहने लगे, तो वहां युद्ध शुरू होता है। ' मम-सत्यं ' यही युद्धका नाम है और जबतक मानव-जाती है, तबतक ' मेरा पक्ष सत्य है ' ऐसा आग्रहसे कहनेवाले लोग होंगे ही। और जहां ऐसे लोग होंगे, वहां युद्ध होंगे ही। अर्थात् जनसमाजमें युद्धकी संभावना सदा रहेगी ही।

मनुष्योंमें तीन मनोवृत्तीके लोग होते हैं। राक्षसी मनोवृत्ती, मानवी मनोवृत्ती तथा दैवी मनोवृत्ती। ये तीन प्रकारकी मनोवृत्तीयां मानवोंमें होती हैं। इनमें राक्षसी मनोवृत्ती ' मेरा ही कहना सत्य है ' ऐसा कहकर युद्ध करनेके लिये प्रवृत्त होती है। ये तीन मनोवृत्तियां मानवोंमें होती हैं और उनमें राक्षसी मनोवृत्ती झगडालू होती है, इसलिये वह किसी न किसी प्रकार दुराग्रह करके युद्धका प्रारंभ करती ही है।

इसके उदाहरण रावण, इन्द्रजीत, धृतराष्ट्रके पुत्र कौरव आदि भारतीय इतिहासमें हैं। सत्ययुगमें भी ये थे और कलियुगमें तो ये हैं ही। सदा राक्षसी प्रवृत्तिवाले लोग जनसमाजमें रहेंगे और वे युद्ध करेंगे। और इनके हाथमें राज्यशासन रहा तो ये अवश्य युद्ध करेंगे। इस तरह राक्षसी वृत्तीके लोग युद्ध करते हैं और युद्ध होते हैं इसलिये सेनाकी आवश्यकता रहती है।

यदचरस्तन्वा वावृधानो बलानीन्द्र प्रब्रुवाणो जनेषु। मायेत् सा ते यानि युद्धान्याहुर्नाद्य शत्रुं ननु पुरा विवित्से॥ ऋ. १०।५४।२

हे इन्द्र! (तन्वा वावृधानः) अपने शरीरके सामर्थ्यसे उत्साहित होनेवाला तू (बलानि जनेषु प्रब्रुवाणः) बलोंके विषयमें सब जनोंमें वर्णन करता है और ऐसा करता हुआ (अचरः) तू भ्रमण करता है। (यानि ते युद्धानि आहुः) जो तुम्हारे द्वारा युद्ध होते हैं ऐसा कहते हैं (सा ते माया इत्) वह तुम्हारा कौशल्यका कार्य ही है, तुम्हारी युद्ध-विषयक कुशलता प्रसिद्ध है। इस युद्ध कुशलताके कारण (न अद्य शत्रुं विवित्से) न तो तुम्हे आज शत्रु प्राप्त होता है, (ननु पुरा) पूर्व समयमें भी तुम्हारे सामने शत्रु नहीं ठहरता था।

इस मंत्रमें शत्रु दूर करनेके लिये जो साधन कहे हैं वे ये हैं—

१ तन्वा वावृधानः - शरीरके सामर्थ्य और उत्साहको बढाना,

२ जनेषु बलानि प्रब्रुवाणः अचरः-जनतामें बलोंका-सेनाओंका अथवा सामर्थ्योंका वर्णन करते हुए भ्रमण करना। सबको बल बढानेका उपदेश करना।

३ यानि युद्धानि आहुः सा ते माया- जो युद्ध करके वर्णन किये जाते हैं वे शूरके कौशलयुक्त कर्म हैं। अर्थात् शूरवीर अतिकुशलतासे युद्ध करते हैं। और शत्रुको परास्त करते हैं।

४ अद्य शत्रुं ननु पुरा विवित्से- इस कारण न तो आज शत्रु सामने खडा रह सकता है और न पूर्व समयमें शत्रु ऐसे वीरके सामने खडा रह सकता था।

इस मंत्रमें 'बलानि और युद्धानि' ये पद अत्यंत महत्त्वके हैं। मनुष्यमें बल चाहिये, वीरता चाहिये और कुशलतासे युद्ध करनेकी शक्ति भी चाहिये। इससे शत्रु दूर हो सकते हैं। जो अत्यंत कुशलतासे युद्ध करता है और अपना बल बढाता है उसके सामने जैसे आज शत्रु ठहर नहीं सकते, वैसे ही पूर्व समयमें भी ठहरते नहीं थे और अर्थात् भविष्यमें भी उनके सामने शत्रु ठहर नहीं सकते। शत्रुको दूर करनेके दो ही उपाय हैं वे ये हैं। अपना बल बढाना और कुशलतासे युद्ध करना। इस मंत्रमें शत्रु हैं, और युद्धसे उनको दूर करनेका उपदेश किया है। अपनी शक्ति बढानेसे शत्रु दूर हो सकते हैं। अपना बल बढानेका अर्थ अपनी वैयक्तिक शक्ति बढाना और अपनी राष्ट्रीय सेना बढाना है। और देखो—

स्तोत्रमिन्द्राय गायत पुरुनृम्णाय सत्वने।
न किर्यं वृण्वते युधि॥ ऋ. ८।४५।२१

(पुरु-नृम्णाय) विशेष पौरुषसे युक्त और (सत्वने) बलवान् (इन्द्राय स्तोत्रं गायत) इन्द्रके लिये स्तोत्रोंका गान करो क्योंकि (युधि) युद्धमें (यं न किः वृण्वते) जिसका कोई पराभव कर नहीं सकता।

इन्द्र पौरुष और बलसे युक्त है, इस कारण कोई शत्रु युद्धमें इसके सामने ठहर नहीं सकता। यहां ऐसा कहा है कि अपना पौरुष और बल बढाना चाहिये और शत्रु अपने सामने न ठहर सके ऐसा करना चाहिये। इस मंत्रमें भी ऐसा कहा है कि युद्ध होने हैं, शत्रु सामने खडे हैं, ऐसी अवस्थामें अपने बल बढाने चाहिये। यह एकमात्र उपाय करने योग्य है। तथा और देखिये—

जज्ञान एव व्यबाधत स्पृधः।
प्रापश्यद् वीरो अभि पौंस्यं रणम्॥
ऋ. १०।११३।४

'उत्पन्न होते ही वीरने शत्रुओंको बाधा पहुंचाई। और उस वीरने जिसमें पौरुषका कार्य होता है ऐसे रणका निरीक्षण किया।' यहां रण शब्द युद्धका वाचक है जिसमें शत्रुओंको दूर करनेका कार्य होता है और विशाल पौरुष प्रयत्नसेही युद्धमें कार्य किया जाता है। और भी इस विषयमें देखिये—

रणं कृधि रणकृत् सत्यशुष्मा
ऽभक्ते चिदा भजा राये अस्मान्। ऋ.१०।११२।१०

"(सत्य-शुष्मा) सच्चा बल अपनेमें बढाओ, (रणकृत्) युद्ध कुशलतासे करनेवाला हो और (रणं कृधि) शत्रुसे युद्ध कर। शत्रुके पासके धन हमें मिले ऐसा कर" यहां 'सत्य-शुष्मा' बनो ऐसा प्रथम कहा है अपने अन्दर सच्चा सामर्थ्य प्राप्त करो। अच्छी तरह बलवान् बनो, तथा 'रण-कृत्' युद्ध करनेवाला बनो। अर्थात् कुशलतासे युद्ध करनेकी शक्ति प्राप्त कर। प्रथम अपने अन्दरका सामर्थ्य बढाना और जहां युद्ध करनेकी आवश्यकता होगी वहां अत्यंत कुशलतासे युद्ध करना और शत्रुको विनष्ट करना। और हमारे पास धन आजाय ऐसा करना। यह उपदेश यहां कहा है। अर्थात् युद्ध जहां करना आवश्यक है वहां अवश्य करना चाहिये।

यदाजिं यात्याजिकृदिन्द्रः स्वश्वयुरूप।
रथीतमो रथीनाम॥ ऋ. ८।४५।७

'(सु-अश्व-युः) उत्तम घोडोंको अपने रथोंको जोडनेवाला (रथीनां रथीतमः) रथी वीरोंमें श्रेष्ठ रथी वीर इन्द्र (आजि-कृत्) युद्धको कुशलतासे करनेवाला (आजिं याति) युद्धमें जाता है।' यहां प्रथम वीरकी तैयारी बतायी है। उत्तम घोडे अपने रथोंको जोतता है और अपने घुडसवारोंके पास भी उत्तम घोडोंको रखता है और रथी वीरोंमें श्रेष्ठ वीर बनता है। इतनी तैयारी करके वह स्वयं उत्तम युद्ध करना जानता है और पश्चात् स्वयं युद्धमें जाकर युद्ध करता है। यौंही अपनी तैयारी करनेके विना ही युद्ध करना

नहीं चाहिये, परंतु अपनी उत्तम तैयारी करके युद्ध आवश्यक हुआ तो ऐसा करना चाहिये कि जिससे शत्रु ठहर न सके। तथा—

आजितुरं सत्पतिं विश्वचर्षणिं
कृधि प्रजास्वाभगम्। ऋ. ८।५३।६

'(सत्पतिं) सज्जनोंका रक्षण करनेवाले, (विश्व-चर्षणिं) सब जनताका हित करनेवाले और (आजि-तुरं) युद्धमें त्वरासे कार्य करनेवाले वीरकी प्रशंसा करो वह हमें (प्रजासु आभगं) प्रजाओंमें भाग्यवान् करे।'

यहां चार पद महत्त्वपूर्ण हैं। (प्रजासु आभगं) प्रजाजनोंमें भाग्यवान् बनना। हरएक चाहता है कि मैं सबसे अधिक भाग्यवान् बनूं। ऐसा हरएकके मनमें रहना स्वाभाविक है। पर यह कैसा बने इस प्रश्नका उत्तर इस मन्त्रके आगेके तीन पदोंने दिया है। यदि भाग्यवान् बनना है तो (सत्-पतिः) सज्जनोंका पालन करो, 'परित्राणाय साधूनां' (गीता) सज्जनोंका संरक्षण करना यह भाग्यवान् बननेका एक साधन है। दूसरा (विश्व-चर्षणिः) सब मानवोंका हित करनेका कार्य करना, सार्वजनिक हित करना, जनताकी सेवा करना इससे इसकी योग्यता बढ जाती है। ये दो कार्य लोकोंके हित करनेके लिये हैं और (आजि-तुरः) युद्ध करनेके समय त्वरासे शत्रुके साथ लडना। शीघ्रतासे शत्रुसे युद्ध करना। उसमें शिथिलता न करना। इससे यह मनुष्य प्रजाजनोंमें भाग्यवान् होता है। यहां भी शत्रुसे युद्ध करना भी एक कार्य गिना है। और देखिये—

तमिन्महत्स्वाजिपूतमर्भे हवामहे।
असि हि वीर सेन्यः। ऋ. १।८१।१-२

उस वीरको (महत्सु आजिषु) बडे युद्धोंमें और उसको (अर्भे हवामहे) छोटे संग्रामोंमें सहाय्यार्थ बुलाते हैं। उसको इसलिये बुलाते हैं कि वह (हे वीर) हे शूर (सेन्यः असि) वह वीर सेनासे सुसज्ज है। उसके पास उत्तम सेना है। शूरवीर स्वयं बलवान् हो और उसके पास उत्तम सेना हो, तब उसका वर्णन लोग करते हैं। वही बात और देखिये—

इन्द्रः समत्सु यजमानमार्यं
प्रावद् विश्वेषु शतमूतिराजिषु
सर्मीह्लेष्वाजिषु। मनवे शासदव्रतान्।
ऋ. १।१३०।८

'इन्द्र (समत्सु) युद्धोंमें श्रेष्ठ सज्जनोंका (प्रावत्) रक्षण करता है। (विश्वेषु आजिषु) सब युद्धोंमें (शतं ऊतिः) सैकडों प्रकारोंके संरक्षण देकर पालन करता है। (स्वः-मीढ्लेषु आजिषु) अपनी शक्ति बढानेवाले युद्धोंमें वह रक्षण करता है और (मनवे) मानवोंका हित करनेके लिये (अ-व्रतान्) दुष्टाचारवाले शत्रुओंको (शासत्) दण्ड देता है।'

इस मंत्रमें युद्धोंमें किस रीतिसे स्वपक्षीयोंका बचाव करना चाहिये, दुष्ट शत्रुओंका दमन किस तरह करना चाहिये, और सब प्रकारके संग्रामोंमें शत्रुओंका पराभव किस रीतिसे करना चाहिये यह सब अच्छी तरह बताया है।

यहांतक अनेक मंत्र हमने देखें, उनमें युद्ध, आहव, आजि, रण, समसत्य' आदि युद्धवाचक बहुतसे शब्द आये हैं। मनुष्य युद्धमें ही खडा है। अनेक प्रकारके युद्ध इसे लडने हैं। इसलिये युद्ध नहीं है ऐसा समझना बडा हानिकारक है। मनुष्य अनेक युद्धोंमें खडा है। इनमें इसे शत्रुओंसे लडकर विजय प्राप्त करना और विजयी होना है। इसलिये जगत्में युद्ध ही नहीं है ऐसा मानना हानिकारक है। युद्धमें हम खडे हैं ऐसा समझकर अपनी तैयारी करनी चाहिये।

अपना व्यक्तिका बल, अपने राष्ट्रका बल अर्थात् सेना, अपना युद्धकौशल ये सब सामर्थ्य योग्य रीतिसे अपने पास सुसज्ज रखने चाहिये। तब ही अपना विजय हो सकता है।

अस्तु। इस तरह हमने वेदमंत्र देखकर यह परिणाम निकाला कि वैदिक राज्यव्यवस्थाके अनुसार राष्ट्रको युद्ध करनेके अवसर आते हैं, उस कार्यके लिये राष्ट्रकी वीरसेना तैयार करनी चाहिये और राष्ट्रमें वीर पुरुष निर्माण करने चाहिये।

सेनाकी इस तरह आवश्यकता सिद्ध होनेपर उस सेनाके विषयमें वेद क्या उपदेश देता है वह अब देखिये—

सब सैनिक समान

प्रथम बात जो वैदिक समयकी सेनामें दीखती है वह सब सैनिकोंकी समानता है। देखिये—

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास उद्भिदः
अमध्यमासो महसा विवावृधुः।
सुजातासो जनुषा पृश्निमातरो
दिवो मर्या आ नो अच्छा जिगातन ॥ ऋ. ५।५९।६

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते
संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय। ऋ. १।६०।५

" (अ- ज्येष्ठासः) इनमें कोई श्रेष्ठ नहीं, (अ-कनिष्ठासः) कोई कनिष्ठ भी नहीं तथा इनमें (अ-मध्यमासः) कोई मध्यम भी नहीं है। अर्थात् ये सब समसमान हैं। ये अपनी (महसा) शक्तिसे (वावृधुः) बढते हैं। ये (जनुषा सुजातासः) जन्मसे ही कुलीन हैं। ये (पृश्नि-मातरः) भूमिको माता माननेवाले हैं अर्थात् मातृभूमिकी सेवा करनेवाले हैं। ये (दिवः मर्याः) ये दिव्य नरवीर हैं। ये (भ्रातरः) परस्पर भाई हैं, (सौभगाय संवावृधुः) ये परस्पर अपने उत्तम भाग्य बढानेके लिये मिलकर प्रयत्न करते रहते हैं। "

इन मंत्रोंमें सैनिकोंकी समसमानताके विषयमें उत्तम रीतिसे वर्णन किया है। सब सैनिक समसमान हैं ऐसा यदि न माना जाय, तो सैनिकोंमें उंचानीचा माना जानेसे उनका आपसमें वैर होगा, वे आपसमें ही 'मैं ऊंचा' और 'वह नीच' ऐसा बोलकर लडेंगे और उनसे शत्रुका पराभव करनेका कार्य तो दूर ही रहेगा। पर अपना ही नाश होगा।

इसलिये सब सैनिक समान हैं, वे जन्मसे ही (जनुषा सुजातासः) उत्तम कुलीन हैं, उनमें जन्मजात उच्चनीचता नहीं है, वे (दिवः मर्याः) दिव्य नरवीर हैं। वे अपनी शक्तिसे बढते हैं। यह नियम कितना उत्तम है यह विचार करके हर कोई जान सकता है।

सैन्यकी भरती कैसी हो

यहांतक विचार हुआ और मालूम हुआ कि सैन्यमें जन्मजात ऊंचा नीचा यह भेद नहीं है। अब इन सैनिकोंकी भरती किस तरह की जाती है वह देखिये—

ये शुभ्रा घोरवर्पसः सुक्षत्रासो रिशादसः।
ऋ. ८।१०३।१४

सत्वानो घोरवर्पसः। ऋ. १।६४।२
मृगा न भीमाः। ऋ. २।३१।१

" जो गौर वर्ण हैं, (घोर-वर्पसः) बडे शरीरवाले हैं और जो (सु-क्षत्रासः) उत्तम क्षात्र कर्म करनेवाले, उत्तम संरक्षण करनेवाले और (रिश-अदसः) शत्रुका नाश करनेवाले हैं। जो (सत्वानः) बलवान् हैं, महान विशाल शरीरवाले हैं और (मृगा न भीमाः) सिंहके समान भयंकर हैं। वे सेनामें भरती होने योग्य हैं। "

यहां (१) सुन्दर वर्ण,
(२) विशाल शरीर,
(३) सुरक्षा करनेका कौशल्य,
(४) शत्रुका नाश करनेका सामर्थ्य,
(५) शारीरिक बल और
(६) उग्रता।

ये गुण देखकर सेनामें भरती करनी योग्य है ऐसा कहा है। प्रथम ये ही गुण देखे जा सकते हैं। अन्य गुण आगे सैनिकीय शिक्षासे प्राप्त हो सकते हैं और बढाये भी जा सकते हैं। पर प्रथम ये गुण तरुणोंमें होने चाहिये। सेनामें भरती होनेके लिये ये गुण तो अवश्य चाहिये।

अरुणप्सवः (ऋ. ८।७।७)- अरुण अर्थात् लाल रंग जिनकी त्वचापर शोभता है ऐसे तरुण सेनामें भरती हों। शरीरपर लाल रंग तब चमकता है कि जब शरीरमें शुद्ध रक्त घूमता रहता है। ये ही तरुण वीर शत्रुके साथ उत्तम युद्ध कर सकते हैं। इन्हींके अन्दर ओज और सत्व स्वभावसे रहता है।

अपने तेजसे तेजस्वी

सेनामें भरती होने योग्य तरुण वीर वे हैं कि जो अपने तेजसे तेजस्वी रहते हैं। देखिये इनके विषयमें कहा है—

ये स्व-भानवः अजायन्त। ऋ. १।३७।२
स्वभानवः धन्वसु श्रायाः। ऋ. ५।५३।४
स्वभानवे वाचं प्रानज। ऋ. ५।५४।१

" जो अपने निजतेजसे चमकते हैं। अपने तेजसे चमकनेवाले वीर धनुष्योंका आश्रय करते हैं। जो अपने तेजसे चमकता है उसकी प्रशंसा करो। "

ये वीर सैनिक हैं। किसी तरुणको देखनेसे सहजहीसे पहचाना जाता है कि यह तरुण अपने निजतेजसे चमकता है वा नहीं। जो अपने चेहरेपर तेल, सुगंध कल्प, अथवा पावडर लगाकर अपने आपको तेजस्वी बतातें हैं, उनकी भरती सैन्यमें नहीं हो सकेगी। परंतु जो (स्व-भानवः)

अपने निजतेजसे तेजस्वी दीखते हैं, अकृत्रिम रीतिसे सुडोल और आनंदी दीखते हैं वैसे तरुण ही सेनामें भरती होनेयोग्य हैं।

एक घरमें रहते हैं

सैनिकोंकी सेनामें भरती होनेपर उनकी रहने-सहनेकी व्यवस्था कैसी होती है यह भी देखनेयोग्य विषय है। ये एक घरमें रहते हैं। इस विषयमें देखिये—

१ समोकसः इषुं दधिरे। ऋ. १।६४।१०
२ अरुक्षया सगणा मानुषासः। अथर्व. ७।७७।३
३ वः उरु सदः कृतम्। ऋ. १।८५।७
४ समानस्मात्सदसः उरुक्रमः निः चक्रमे।
ऋ. ५।८७।४
५ सनीळा मर्याः स्वश्वाः नरः। ऋ. ७।५६।१
६ सवयसः सनीळाः समान्याः। ऋ.१।६५।१

[१] (सं-ओकसः) एक घरमें रहनेवाले ये वीर बाण हाथमें धारण करते हैं।

[२] (उरु-क्षयाः) जिनका घर बडा है और जो (स- गणाः) संघके साथ रहते हैं अर्थात् जो अकेले अकेले नहीं रहते और जो मनुष्योंकी सेवा करनेके लिये तत्पर रहते हैं।

[३] (वः उरु सदः कृतं) आपके लिये, हे सैनिको! यह बडा घर बनाया है।

[४] (समानस्मात् सदसः) सबके एक घरसे (निः चक्रमे) एक एक वीर बाहर पडता है।

[५] ये (मर्याः) मरनेके लिये तैयार हुए वीर (स-नीळाः) एक घरके रहनेवाले और (सु-अश्वाः) उत्तम घोडोंपर बैठनेवाले हैं।

[६] ये वीर (स-वयसः) एक आयुवाले (स-नीळाः) एक बडे घरमें रहनेवाले और (स-मान्याः) सबकी मान्यता समान है ऐसे ये वीर हैं।

सैनिकोंके बडे मकान

यहां " (१) सं—ओकसः, (२) उरु—क्षयाः, (३) उरु सदः, (४) समानं सदः, " ये पद इन सैनिकोंका घर एक बडा भारी विस्तीर्ण होता था, यह भाव बताते हैं। युरोपीयन भारतमें आनेपर उन्होंने जो अपनी सेनाकी रचना की, उसमें भी उन्होंने एक बडे मकानमें ही सैनिकोंको रखा था। एक एक या दो दो कमरोंकी पंक्ति जिसमें हैं ऐसे लंबे मकान जिनको अंग्रेजीमें 'बरेक' कहते हैं, सैनिकोंके लिये अंग्रेजोंने बनाये। यही भाव इन पदोंसे स्पष्ट रूपसे दीख रहा है।

एक बडे मकानमें रहनेसे रहनेवालोंके अन्दर हम सब समान हैं, हममें बडा छोटा कोई नहीं यह भाव रहता है। इसलिये वैदिक समयके सैनिकोंको एक बडे मकानमें रखा जाता था। अंग्रेज भी इसी हेतुसे सैनिकोंको बडे घरमें रखते थे। पर भारतके आधुनिक समयके राजे अपने सैनिकोंको ऐसे बडे मकानोंमें रखते नहीं थे। इन हिंदु राजाओंके राज्यमें वेदपाठी पंडित थे, शास्त्री तथा विद्वान् भी थे। पर वेदपाठी वेदका अर्थ जानते नहीं थे और शास्त्री वेदमंत्रोंको याद नहीं करते थे और राजालोग वेदमें क्या है यह जानते नहीं थे, इस कारण हमारी सैनिकीय विद्या वेदकी वेदमें रही। युरोपीयनोंने यहां सेनाकी रचना वेदानुकूल की पर उस ओर किसीने देखा भी नहीं। जिनके पास वेद नहीं थे वे वेदके अनुसार अपने सैनिकोंको रखते थे और उससे सामर्थ्य प्राप्त करते थे और राज्य जीतते जाते थे। पर जिनके पास वेद थे वे अज्ञानके कारण कोरेके कोरे ही रहे और पराभूत होकर पारतंत्र्यमें भी पहुंचे।

यह यहां इसलिये कहना पडा कि वेदकी सैनिकीय शिक्षा सामर्थ्य बढानेवाली थी। इसलिये यदि वेदका ज्ञान मानवी व्यवहारमें आजाता, तो यूरोपीयनों द्वारा सहजहीमें भारतीय सेनाओंका पराभव न होता और भारत परतंत्र भी न होता। यह माना जा सकता है कि पराभवके लिये अन्यान्य भी कारण थे। यह सत्य है, तथापि यह सैनिकीय तैयारी यदि हमारी वेदके कथनानुसार होती, तो हमारे पराभवको कुछ न कुछ मर्यादा तो अवश्य होती।

उपर दिये मंत्रोंमें ' स-गणाः ' पद है। अर्थात् गणोंके साथ ये सैनिक अपने विशाल घरमें रहते हैं। गण उन सैनिकोंका नाम है कि जिनका प्रवेश सेनामें हुआ है और उनकी गणना सैनिक करके हो चुकी है।

इन मंत्रोंमें ' स्वश्वाः (सु-अश्वाः)' पद है। उत्तम घोडे जिनके पास रहते हैं। अर्थात् घुडदलके सैनिक भी

ऐसे ही बडे विशाल मकानमें रहते थे। वैदिक समयमें जैसे पदाती (पैदल) विभागके सैनिक होते थे, वैसे ही घुडसवार भी होते थे। पैदलोंके समान ही घुडसवारोंकी रहने सहनेकी अनुशासन पद्धति समान ही थी। अर्थात् पैदल वीरोंकी रहनेकी शाला एक स्थानपर होती थी और घुडसवारोंकी दूसरे स्थानपर होती थी। उनके घर पृथक् होते थे, और घोडोंके स्थान भी पृथक् रहते थे। यहां हमें मालूम हुआ कि वैदिक समयमें घुडसवारोंकी सेना भी पृथक् थी।

इन मंत्रोंमें 'मनुषासः, मर्याः, नरः' ये तीन पद हैं। ये सर्वसाधारणतः मनुष्यवाचक हैं, परंतु यहां 'मानवोंकी सेवा करनेवाले' इस अर्थमें विशेषकर ये पद आये हैं। मनुष्योंका हित करनेका प्रयत्न करनेवाले। 'नरः नृभ्यो हिताः' इस तरह इनका अर्थ समझना योग्य है। सैनिक नागरिकोंका हित करनेके लिये ही सेनामें प्रविष्ट होते हैं। यह कर्तव्य इन सैनिकोंका यहां व्यक्त हुआ है।

खेलनेमें प्रवीण

ये सैनिक खेल अर्थात् मर्दानी खेल खेलनेमें प्रवीण थे। वीरोंको ऐसा ही मर्दानी खेलोंके विषयमें प्रेम रहना चाहिये—

शीशूला न क्रीळाः सुमातरः। ऋ. १०।७८।६

'उत्तम माताओंको उत्तम खेल खेलनेवाले पुत्र होते हैं।' जो उत्तम वीर होते हैं, वे मर्दानी खेल खेलनेमें अत्यंत प्रेम रखते हैं। इनका स्वभाव ही खेल खेलनेकी ओर होता है। ऐसे उत्तम मर्दानी खेल खेलनेवाले बडे वीर और बडे बहादर होते हैं। वीरोंको मर्दानी खेलोंमें प्रवीण रहना चाहिये।

ये सैनिक स्त्रियोंके समान सजते हैं।

हम सैनिकोंको जिस समय देखते हैं, उनके सब कोट, बूट, सूट, टोपी, बटन, शस्त्र-अस्त्र सब चकफक रहते हैं। ऐसा दीखता है कि ये सदा स्त्रियोंके समान सजेसजाये ही रहते हैं। यही बात वेदमंत्रमें वर्णन की है देखिये—

प्र ये शुम्भन्ते जनयो न सप्तयः
मदन्ति वीरा विदथेषु घृष्वयः। ऋ. १।८५।१

(ये) ये वीर (जनयः न) स्त्रियोंके समान (प्रशुम्भन्ते) अपने आपको सुशोभित करते हैं। स्त्रियां जिस तरह सदा अपने आपको सजाकर रखती हैं, उस तरह ये वीर अपने आपको सदा सजाकर रखते हैं। किसी समय इनकी कोई चीज या कोई वस्तु सुशोभित नहीं होती ऐसा नहीं होता। सदा इनकी वेषभूषाके सभी पदार्थ ठीकठाक और चकफक तथा जैसे सुशोभित हो सकते हैं, वैसे ही होते हैं। किसी भी समय, किसी भी रीतिसे, किसी भी स्थानपर शोभारहित वस्तु उनके शरीरपर दीखती नहीं। सदा ये सजेसजाये रहते हैं। सदा ठीकठाक रहते हैं।

यज्ञदृशः न शुभयन्ते मर्याः। ऋ. ७।५६।१६
गोमातरः यत् शुभयन्ते अञ्जिभिः। ऋ. १।८५।३

"यज्ञ देखनेके लिये जिस समय लोग जाते हैं उस समय जैसे सजकर, सुन्दर होकर जाते हैं, अपने शरीरको तथा अपने पोषाखको सजाकर जाते हैं, उस तरह ये सैनिक वीर सजेसजाये होनेके कारण सुन्दर दीखते हैं। गौको माता माननेवाले ये वीर अपने गणवेषसे अपने आपको सुशोभित करते हैं।"

यहां 'अञ्जि' पद 'गणवेष' का वाचक है। जो जिसका गणवेष होता है वह डालकर वह वीर सजकर अपने कामपर या अपने स्थानपर खडा रहता है, इस कारण वह वहां बडा सुंदर दीखता है।

हम सैनिक या पुलिसको सदा सजासजाया देखते हैं। इस कारण इसका परिणाम जनतापर होता है। यह बात वैदिक समयके राजकर्ताओंने जान ली थी। अतः वे अपने सैनिकोंको सदा सजेसजाये रखते थे। उनका अनुशासन ही वैसा था कि कोई सैनिक ढिलाढाला न रहे, कोई मलीन न रहे। सब सैनिक प्रभावी रहें। और देखिये—

स्वायुधः इष्मिणः सुनिष्काः।
उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः। ऋ. ७।५६।११
सस्वः चिद्धि तन्वः शुम्भमानाः। ऋ. ७।५।७
स्वः क्षत्रेभिः तन्वः शुम्भमानाः। ऋ. १।१६५।५

"(सु-आयुधाः) उत्तम शस्त्र धारण करनेवाले, (इष्मिणः) गतिमान, (सुनिष्काः) उत्तम मणियोंका हार धारण करनेवाले, अथवा अपने शरीरपर रहनेवाले

सुवर्णके भूषण जिनके उत्तम तेजस्वी हैं ऐसे ये वीर (तन्वं शुम्भमानाः) अपने शरीरको सुशोभित रखते हैं। (सस्वः) गुप्तस्थानमें रहनेवाले अपने शरीरको सजाते हैं। (स्व-क्षत्रेभिः) अपने शौर्यसे अपने शरीरकी शोभा बढाते हैं।"

ये वीर (सु—आयुधः) अपने आयुधोंको, अपने शस्त्रास्त्रोंको अत्यंत तेजस्वी अवस्थामें रखते हैं। साफसफाई करके अपने सब आयुध उत्तम स्थितिमें रखते हैं। कोई शस्त्र मलिन होने नहीं देते। (इष्मिनः) इष्—अन्न और धनसे युक्त। सबके अन्न और धनका संरक्षण करनेके कारण इनको अन्न, धन जो चाहिये वह प्राप्त रहता है।

(सु—निष्काः) निष्क नाम मोहोर या अलंकारका है। अपने शरीरपर धारण करनेके अलंकार, कपडे, वेष भूषाके अलंकार आदि सबके सब जिसके तेजस्वी हैं। अपने शरीर-की शोभा बढानेवाले, मूंछ, दाढी, बाल आदिको अत्यंत आकर्षक जो रखते हैं। इसका अर्थ यह है कि किसी भी तरह शोभामें न्यून न हो ऐसी सदा व्यवस्था दक्षतासे करनेवाले तथा अपना सौंदर्य बढे इसलिये जो यत्न करते हैं ऐसे ये वीर हैं।

(सस्वः) स्वयं गुप्त स्थानमें रहते हैं। पुलिस अथवा सैनिक भी किसी किसी समय कुछ कारण विशेषके लिये गुप्त स्थितिमें रहते हैं। किसी दूसरेको न दीखें ऐसी स्थिति-में रहते हैं। तथापि ऐसे समयमें भी वे अपने शरीरको सुंदर रखते ही हैं।

(स्वक्षत्रेभिःतन्वं शुंभमानाः) अपने क्षात्र चिन्होंसे अपने शरीरकी शोभा बढाते हैं। अपने ओहदेके चिन्होंसे ये अपने शरीरको सजाते हैं। इनकी यह सजावट, इनका रुवाब बढानेके लिये सहायक होती है।

पिशा इव सुपिशः। ऋ. १।६४। ८
अनुश्रियः धिरे। ऋ. १। ११६।१०
सुचन्द्रं सुपेशसं वर्णं दधिरे। ऋ. २।३४।१३
महान्तः विराजथ। ऋ. ५।५५।२
रूपाणि चित्रा दृशर्या। ऋ. ५।५२।११

"उत्तम सुन्दर रूप जैसा सुन्दर दीखता है, वैसे जो सुन्दर दीखते हैं। इसप्रकारसे जो अपनी शोभा बढाते हैं। उत्तम तेजस्वी, अत्यंत सुन्दर वर्णका धारण करते हैं। बडे होकर विराजते रहो। इनके नानाप्रकारके रूप देखने योग्य हैं।"

जिन्होंने सैनिक देखें हैं, वे जैसे सजे रहते हैं। वैसे ही ये वैदिक समयके सैनिक अपने शरीर, बाल, मूछियां, दाढी, साफा, अस्त्रशस्त्र आदिको बडा तेजस्वी, सुन्दर तथा प्रभावी रखते थे। जिससे इनकी शोभा बढती थी और समयपर अस्त्रशस्त्र भी कार्यक्षम रहते थे। शोभाकी शोभा और उपयोगका उपयोग, ऐसे दोनों प्रकारके लाभ इनकी सजावटसे होते थे।

मरुतोंका गणवेष

ये जो वीर हैं वे 'मरुत्' करके वर्णित हुए हैं। मरुत्का अर्थ यह है—

मरुतो मितराविणो वा मितरोचनो वा महद् रवन्तीति वा। निरु. ११।२।१

कईयोंकी संमतिसे यह यास्काचार्यका वचन ऐसा है—

मरुतोऽमितराविणो वाऽमितरोचनो वा महद् द्रवन्तीति वा। निरु. ११।२।१

इसका भाव यह है—

१ मरुतः = मितराविणः = मितभाषी, अधिक बडबड न करनेवाले;

२ मरुतः = अमित-राविणः = बहुत भाषण करनेवाले;

३ मरुतः = मितरोचनः = परिमित प्रकाश देनेवाले;

४ मरुतः = अमित रोचनः = अपरिमित प्रकाशनेवाले;

५ मरुतः = महत्द्रवन्ति = बडी गतिसे जो जाते हैं।

निरुक्तकारके इस वचनके ये दोनों प्रकारके अर्थ टीकाकार मानते हैं इस कारण ये यहां दिये हैं। और भी 'मरुत्'के अर्थ हैं वे अब देखिये—

१ मरुत् = (मा-रुद) = न रोनेवाले, युद्धमें न रोते हुए अपने कर्तव्य करनेवाले,

२ मरुत् = (मा-रुत्) = न बोलनेवाले, कम बोलनेवाले।

३ मरुत् = (मर्-उत्) = मरनेतक उठकर अपना कर्तव्य करनेवाले।

इस तरह अर्थ करके यह बताया है कि ये मरुद्वीर बहुत भक्‌भक् करते नहीं, परंतु चुप रहकर अपना कर्तव्य करते हैं। कभी रोते नहीं रहते, परंतु तत्परतासे अपना कर्तव्य आनंदके साथ करते हैं। मरनेतक उठकर कार्य करते रहते हैं। आलस्यमें कभी रोते नहीं रहते।

मरुत् वीरसैनिक हैं। इनका कार्य कैसा होना चाहिये यह बात इन अर्थोंके द्वारा बतायी है। पदोंका अर्थ करके तथा पदकी व्युत्पति करके उसके गुण बताये जाते हैं। इसलिये इस व्युत्पत्तिका महत्त्व है। तथा व्युत्पत्तिका भाव बतानेवाले मंत्र भी रहते हैं। अस्तु। वीरोंके गुण इन अर्थोंके द्वारा बताये हैं। वीर न रोयें, न भक्‌भक् करें, न बोलते ही रहें, परंतु शक्ति रहनेतक अपना कर्तव्य करते रहें।

वीरोंके शस्त्र

वीरोंके शस्त्रास्त्र तथा गणवेषका वर्णन निम्नस्थानमें लिखित मंत्रोंमें देखने योग्य है—

वाशीमन्तो ऋष्टिमन्तो मनीषिणः
सुधन्वान इषुमन्तो निषङ्गिणः।
स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः
स्वायुधा मरुतो यायना शुभम् ॥ २ ॥
ऋष्टयो वो मरुतो अंसयोरधि
सह ओजो बाह्वोर्वो बलं हितम्।
नृम्णा शीर्षस्वायुधा रथेषु वो
विश्वा वः श्रीरधि तनूषु पिपिशे ॥ ६ ॥
ऋ. ५।५७

(वाशीमन्तः) बर्चियाँ धारण करनेवाले, (ऋष्टिमन्तः) भाले बर्तनेवाले, (सु-धन्वानः) उत्तम धनुष्य धारण करनेवाले, (इषुमन्तः) बाण पास रखनेवाले, (निषङ्गिनः) तर्कस-बाणोंकी थैलियां पास रखनेवाले, (सु-रथाः) उत्तम रथमें बैठनेवाले, (सु-अश्वाः) उत्तम घोडे अपने पास रखनेवाले, (पृश्नि-मातरः) मातृभूमिकी उपासना करनेवाले आप वीर (मनीषिणः) मनको अपने आधीन रखनेवाले हैं। ये अपने मनको इधर उधर भटकने नहीं देते। अच्छे कार्यमें अपने मनको लगाते हैं। ऐसे तुम (शुभं यायन) शुभ कर्म करनेके लिये आगे बढो।

आपके (अंसयोः अधि) कंधोंपर (ऋष्टयः) भाले हैं, (वः बाह्वोः) आपके बाहुओंमें (सहः ओजः बलं हितं) साहस, सामर्थ्य और बल रखा है। (शीर्षःसु नृम्णा) आपके सिरपर साफे हैं। यहांका ' नृम्णा ' पद ' साफा, मुकुट, अथवा (नृ-मणा) मनुष्योंका मन जिसपर आकर्षित होता है वह आभूषण, वस्त्र अथवा पहनने योग्य वस्तु ' ऐसा भाव बताता है। पर यह (शीर्षः सुनृम्णा) सिरमें धारण करने योग्य सुन्दर वस्तु है। यह मुकुट होगा, या सुन्दर साफा होगा और ऐसी ही कोई दूसरी सिरमें पहनने योग्य चीज होगी। ' नृम्णा ' का अर्थ ' हिरण्मयानि पदोष्णीषादीनि ' यह अर्थ सायनाचार्य देते हैं। इसका अर्थ जरतारीका साफा ऐसा है।

(रथेषु आयुधा) रथोंमें शस्त्र या आयुध रखे हैं। ऐसे ये वीर (विश्वा श्रीः तनूषु पिपिशे) सब शोभा इनके शरीरोंमें चमकती है। यह वर्णन सैनिकोंका है। युरोपीयन सेनाके सैनिकोंमें शस्त्रास्त्र भले ही दूसरे हों, पर उनके शरीर गणवेष धारण करनेके पश्चात् ऐसे शोभते हैं इसमें संदेह नहीं है। ऐसे ही सैनिक वैदिक समयकी सेनामें थे यह यहां देखने योग्य है। इनका वर्णन और देखिये—

अंसेष्वा मरुतः खादयो वो
वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना
अनु स्वधामायुधैर्यच्छमाना ॥ ऋ. ७।५६।१३

(अंसेषु खादयः) तुम्हारे कधोंपर आभूषण हैं, (वक्षःसु रुक्मा) छातीपर सुवर्णके कण्ठे (उपशिश्रियाणाः) लटक रहे हैं। वृष्टिके समय (विद्युतः न) बिजलियां चमकती हैं उस तरह चमक दमक तुम अपने आयुधोंसे (अनु यच्छमानाः) चमका रहे हैं। इसी तरह और भी सैनिकोंके पोषाखका वर्णन देखिये—

समानमञ्ज्येषां विभ्राजन्ते रुक्मासो अधि
बाहुषु। दविद्युतत्यृष्टयः ॥ ११ ॥
त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो
नकिष्टनूषु येतिरे।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वोऽनीकेषु
अधिश्रियः ॥ १२ ॥ ऋ. ८।२०।११-१२

(एषां) इन सब सैनिकोंके (अज्रि) आभूष (समान) समान हैं । सबकी वेषभूषा, सबका गणवेष समान है। यह महत्त्वका वर्णन यहां देखने योग्य है । जितने सैनिक होंगे उन सबकी वेषभूषा समान होनी चाहिये। जो पोषाख जो शस्त्र-अस्त्र, जो कपडे एकके होंगे वे ही सबके होंगे । ऐसा होनेके लिये ही ' गणवेष धारण करना ' कहते हैं । गणवेष सबका समान ही होता है ।

(बाहुषु अधि रुक्मासः विभ्राजन्ते) बाहुओंपर चांद चमकते रहते हैं । वे भी सब सैनिकोंके एक जैसे ही होते हैं । (ऋष्टयः दविद्युतत्) भाले सबके चमक रहे हैं ।

(ते उग्रासः वृषणः) वे उग्र दीखनेवाले बलवान् वीर (उग्र बाहवः) जिनके बाहू उग्र प्रभावी दीखते हैं । (तनूषु नकिः येतिरे) ये वीर अपने शरीरके सम्बन्धमें कुछ भी विचार नहीं करते । अर्थात् युद्धके समय या जनताकी सेवा करनेके समय अपने शरीरकी पर्वाह न करके जनसेवाका कार्य करते हैं । कहीं भी आग लगी तो अन्दर घुसते हैं और किसीको बचाना हो तो उसको बचाते हैं । अर्थात् अपने शरीरकी पर्वाह न करते हुए जनसेवाका कार्य करते हैं ।

आपके आयुध रथोंमें स्थिर रहते हैं। जहां जो शस्त्र रखना हो वह ठीक उसी स्थानपर रखा जाता है। कभी इधर उधर नहीं रखा जाता। इतनी व्यवस्था तथा अनुशासन इनका शस्त्रास्त्र रखनेके कार्यमें रहता है। रातमें या अन्धेरेमें भी वहांका फलाना शस्त्र लाना हो तो वहांसे ही ये ला सकते हैं । क्योंकि प्रत्येक शस्त्रका स्थान नियत है और वह उसके स्थानपर ही रखा जाता है । सैनिकोंकी हरएक कार्यवाहीमें यह अनुशासन अत्यंत आवश्यक है । सेनाका सामर्थ्य इस अनुशासनसे बढता है ।

यहां कहा है कि (रथेषु स्थिरा धन्वानि) रथोंमें स्थिर धनुष्य हैं । अर्थात् दो प्रकारके धनुष्य होते हैं । एक स्थिर धनुष्य रथके स्तंभके साथ लगे रहते हैं। ये धनुष्य बडे होते हैं। इनका बाण बहुत दूर जाता है । दूसरे धनुष्य हाथमें पकडकर चलानेके होते हैं। ये धनुष्य छोटे होते हैं। ये धनुष्य हाथमें लेकर जिधर चाहिये उधर जाकर शत्रुपर चलाये जाते हैं। स्थिर धनुष्य अपने स्थानसे हिलाये नहीं जाते। परन्तु चलधनुष्य हाथमें पकडकर जहां चाहिये वहां ले जा सकते हैं। वीरोंके लिये इन दोनों धनुष्योंकी आवश्यकता रहती है । और देखिये—

युवानो रुद्रा अजरा अभोग्घनो
ववक्षु अध्रिगावः पर्वता इव ।
दृळहा चिद्विश्वा भुवनानि पार्थिवा
प्रच्यावयन्ति दिव्यानि मज्मना ॥ ३ ॥

चित्रैरञ्जिभिर्वपुषे व्यञ्जते
वक्षःसु रुक्माँ अधि येतिरे शुभे ।
अंसेष्वेषां नि मिमिक्षु ऋष्टय
साकं जज्ञिरे स्वधया दिवो नरः ॥ ४ ॥

ऋ० १।६४।३-४

(युवानः रुद्राः) ये तरुण वीर शत्रुको रुलानेवाले (अजराः) जरारहित (अ-भोग्-घनः) अनुदार शत्रुका वध करनेवाले, (अ-ध्रि-गावः) जिनकी गतिको कोई रोक नहीं सकता, (पर्वता इव ववक्षुः) पर्वतोंके समान स्थिर रहते हैं, जनताको सुखी करनेकी इच्छा करते हैं । (मज्मना) अपने सामर्थ्यसे (विश्वा पार्थिवानि दिव्यानि भुवनानि) सब पृथ्वीपरके तथा आकाशमें रहनेवाले सब स्थिर भुवनोंको भी (प्रच्यावयन्ति) हिला देते हैं ।

सुस्थिर सुदृढ शत्रुके स्थानोंको हिला देते हैं, तोडते हैं, चलाते हैं । शत्रुके स्थान सुदृढ होनेपर भी ये वीर उसको तोडकर नष्ट कर देते हैं । अर्थात् इन वीरोंके लिये किसी भी शत्रुका स्थान सुस्थिर नहीं है, इतना इनका सामर्थ्य है।

ये वीर (चित्रैः अञ्जिभिः) चित्रविचित्र भूषणोंसे (वपुषे व्यञ्जते) अपने शरीरको सुशोभित करते हैं । (शुभे वक्षःसु रुक्मान्) शरीरकी शोभा बढानेके लिये छातीपर चांद धारण (अधि येतिरे) करते हैं । (एषां अंसेषु ऋष्टयः निमिमिक्षुः) इनके कन्धोंपर भाले चमकते रहते हैं। ये (नरः) नेता वीर (स्वधया साकं) अपनी धारणशक्तिके साथ (दिवः जज्ञिरे) द्युलोकसे प्रकट हुए ऐसा प्रतीत होता है ।

इन मंत्रोंमें इन वीरोंका हमला शत्रुपर कैसा होता है यह ठीक तरह बताया है । शत्रु कितना भी प्रबल हुआ तो भी उसको ये उखाड देते हैं । ये तरुण वीर होते हैं और शत्रुको उखाडकर भेज देनेमें अत्यंत प्रवीण होते हैं । ऐसे

ये वीर होते हैं। अपने सैनिक कैसे होने चाहिये यह यहां अच्छी तरह बताया है।

वीरोंका गणवेश

इन वीरोंका गणवेश कैसा था, इसका वर्णन अब देखिये—

(१) सिरमें

वीरोंके शिरोभूषणके सम्बन्धमें इस तरह लिखा है—

१ **शीर्षस्सु नृम्णा** (ऋ. ५।५७।६) = सिरमें साफा, पगडी अथवा जरतारीका शिरोवेष्टन।

२ **शिप्रा शीर्षन् हिरण्ययी** (ऋ. ८।७।२५) = सिरपर साफा जिसपर सुवर्णकी नकशीका काम किया होता है ऐसा है।

३ **हिरण्य-शिप्राः** (ऋ. २।३४।२) = सिरपर बांधनेके लिये जरतारीका साफा होता है।

इस तरह शिरोभूषणके विषयमें कहा है। इससे साफा, जरतारीका साफा अथवा पगडी जिसपर जरतारीकी नकशी रहती है, यह वैदिक समयके सैनिकोंका शिरोवेष्टन था ऐसा प्रतीत होता है।

(२) कंधोंपर भूषण

कन्धोंपर रहनेवाले भूषणोंके विषयमें ये मन्त्र देखने योग्य हैं—

अंसेषु ऋष्टयः। ऋ. १।६४।४; ५।५४।११
ऋष्टयोः अंसयोरधि। ऋ. ५।५७।६
ऋष्टिमन्तो मनीषिणः। ऋ. ५।५२।२
अंसेषु खादयः। ऋ. ७।५६।१३
अंसेषु प्रपथेषु खादयः। ऋ. १।११६।९
ऋष्टिविद्युतः कवयः सन्ति। ऋ. ५।५२।१३
वाशीमन्तः ऋष्टिमन्तः। ऋ. ५।५७।२
कीळथ ऋष्टिमन्तः। ऋ. ५।६०।२

"आपके कन्धोंपर भाले हैं। तुम बुद्धिमान हो और भाले धारण करनेवाले हो। कन्धोंपर (खादयः) एक प्रकारके पदक जैसे आभूषण रखे जाते हैं। इन वीरोंके भाले बिजली जैसे तेजस्वी होते हैं। ये कवि होनेपर भी भाले बर्तते हैं।"

यहां कन्धोंपर धारण करनेकी दो वस्तुएं कहीं हैं। एक भाले और दूसरा आभूषण 'खादी'। यह आभूषण सोनेका या चांदीका होता है। पदक जैसा होता है और सुन्दर तथा बडा तेजस्वी दीखता है।

(३) छातीवर भूषण

अब छातीपरके भूषणके विषयमें देखिये—

वक्षःसु रुक्मा। ऋ. १।६४।४; ७।५६।१३
रुक्मास अधि बाहुषु। ऋ. ८।२०।११
तनूषु शुभ्रा दधिरे वि रुक्मतः। ऋ. १।८५।३
वक्षःसु रुक्मा रभसास अञ्जयः। ऋ. १।१६६।१०
वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभः। ऋ. ५।५४।११
खादयः वः वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः। ऋ. ७।५६।१३
मरुत रुक्मवक्षसः। ऋ. २।३४।२
युञ्जते मरुतः रुक्मवक्षसः अश्वान्। ऋ. २।३४।८
बृहद्व्यः दधिरे रुक्मवक्षसः। ऋ. ५।५५।१
सुजातासः जनुषा रुक्मवक्षसः। ऋ. ५।५७।३
ये भ्राजसा रुक्मवक्षसः। ऋ. १०।७८।२
यदेजथ मरुतः रुक्मवक्षसः। अथर्व. ६।२२।२

इन वीरोंके छातीपर सोनेके पदकोंके हार होते हैं। ये हार बडे तेजस्वी रहते हैं, चमकते रहते हैं और बडे सुंदर दीखते हैं। शरीरकी हलचल होनेसे इनकी चमक दमक प्रभावी रीतिसे आकर्षक प्रतीत होती है और बडी सुन्दर

दीखती है। ये वीर घोडोंको जोतनेके समय, अपने कार्यपर जानेके समय, वर्दी पहननेपर इनको पहनते हैं जिससे इनके शरीर सुन्दर आकर्षक तथा प्रभावी प्रतीत होते हैं।

जैसे आजकल पदक (मेडल) पहनते हैं उसी तरहके ये रुक्म होते थे। यह छातीपर पहननेके और बाहुओंपर पहननेके ऐसे दो प्रकारके होते हैं।

(४) कुल्हाडे धारण करना

ये वीर हाथमें कुल्हाडा धारण करते थे इस विषयमें कहा है—

ये वाशीमन्त अजायन्त। ऋ. १।३७।२

हिरण्यवाशीभिः अग्निस्तुषे। ऋ. ८।७।३२

ते वाशीमन्तः। ऋ. १।८७।५

वस्तनूषु अधिवाशीः। ऋ. १।८८।५

ये वाशीषु धन्वसु आयाः। ऋ. ५।५३।४

'वाशी' का अर्थ 'कुल्हाडा' है। अथवा फरशी भी इसे कह सकते हैं। यह एक शस्त्र है। ये वीर कुल्हाडा या फरशी लेकर बाहर जाते हैं। यहां 'हिरण्यवाशी' कहा है। यह फरशी है पर उसपर सुवर्णकी नकशी की है ऐसी सुन्दर फरशी यह है। ये वीर फरशी और धनुष्यका आश्रय लेते हैं अर्थात् यह उनका प्रिय हत्यार होता है। भाले, कुल्हाडा, फरशी, खड्ग, गदा, धनुष्य, बाण आदि अनेक शस्त्र ये बर्तते थे।

(५) काटनेवाला शस्त्र

हस्तेषु खादिः च कृतिः च संदधे। ऋ. १।१६८।३

हाथोंमें 'कृति' करके एक हथियार होता था। यह काटनेका कार्य करता था। यह हथियार ये वीर बर्तते थे। और एक शस्त्र था उसका नाम 'क्रिविः-दति' है इसका वर्णन ऐसा है—

यत्र वः दिद्युत् क्रिविर्दती। ऋ. १।१६६।६

क्रिवि और दती। इसको दांत रहते हैं, वे काटते हैं और इस तरह यह शस्त्र बडा घातक होता है। इस तरह अनेक प्रकारके शस्त्र इन वीरोंके पास रहते थे। जो एकके पास रहे वही वैसा ही शस्त्र सब वीरोंके पास रहता था। संघसे रहनेका अर्थ यही है। तथा सब वीर समान हैं इसका भी यही अर्थ है।

इससे यह सिद्ध हुआ कि—

१ वैदिक समयमें राज्य, स्वराज्य, साम्राज्य आदि अनेक प्रकारके राज्यशासन प्रचलित थे।

२ राज्यका संरक्षण करनेके लिये सेना रखी जाती थी और सैन्यकी शिक्षा पूर्णरूपसे अनुशासनसे होती थी।

३ सेनाके सैनिकोंको रहनेके लिये बडे मकान बने होते थे, और इनमें अनेक कमरोंमें अनेक सैनिक रहते थे। ये घर सरकारी होते थे।

४ घुडसवारोंकी सेना भी होती थी और इन सैनिकोंके रहनेका प्रबन्ध भी उसी तरह होता था जैसा साधारण सैनिकोंका होता था।

५ सेनाके पास शस्त्र अस्त्र आदिका संभार अच्छा रहता था और इन शस्त्रोंसे शत्रुको परास्त किया जाता था।

६ युद्धके अनेक प्रकार होते थे और उनकी शिक्षा सैनिकोंको प्रथमसे दी जाती थी।

७ सब सैनिक समान समझे जाते थे। इनमें कोई श्रेष्ठ और दूसरा कनिष्ठ ऐसा नहीं था। सबका समान दर्जा रहता था।

८ सबका गणवेश तथा उनके शस्त्र अस्त्र समान रहते थे। किसी भी कारण उनमें न्यूनता या अधिकता मानी नहीं जाती थी।

९ भरती करनेके समय उनके विशाल शरीर, क्षात्रकर्म करनेमें उनकी समर्थता, शत्रुका नाश करनेकी उनकी पात्रता, बल, सामर्थ्य तथा साहस देखा जाता था और सेनामें भरती होती थी। सेनामें भरती होनेपर फिर वे सबके सब समान माने जाते थे।

१० ये वीर निजसामर्थ्यसे सामर्थ्यवान् हों ऐसी शिक्षा उनको दी जाती थी।

११ ये सब सैनिक मातृभूमिके सेवक हैं, मातृभूमिकी सेवाके लिये जो करना आवश्यक होगा, वह सब उनको करना आवश्यक था।

१२ इनका रहना सहना संघशः ही होता था।

१३ ये सैनिक घोडे भी अपने पास रखते थे। इनकी युद्धसवारकी सेना बनती थी। इनका रहन सहन भी समान रीतिसेही होता था।

१४ खेलमें प्रवीण होनेकी आवश्यकता इनके लिये थी। नानाप्रकारके खेलोंमें ये प्राविण्य कमाते थे।

१५ ये सैनिक स्त्रियोंके समान अपने आपको सजाते थे। अपनी हरएक वस्तु स्वच्छ, सुंदर तथा चमकदार रखना इनका कर्तव्य था।

१६ ये वीर अधिक बडबड करते नहीं थे। जितना जिस समय आवश्यक है उतना ही ये बोलते थे। गप्पें मारते हुए ये कभी बैठते नहीं थे।

१७ कुऱ्हाडा, फरशी, भाला, धनुष्यबाण ये सब उनके शस्त्र थे।

१८ सिरपर साफा रहता था, छातीपर चांद और बाहुओंपर भाला रहता था। अन्यान्य शस्त्र अस्त्र अन्य रीतिसे साथ रहते थे। हरएक शस्त्र अस्त्र चमकदार रखना इनका कर्तव्य था।

इतना विषय प्रतिपादन इस व्याख्यानमें हुआ है। आगेके लेखमें क्या अधिक मिलता है यह देखेंगे।

प्र श्न

१ वेदमें कितने प्रकारके राज्योंके वर्णन हैं ?
२ सेनाकी आवश्यकता वेदने किस तरह बतायी है ?
३ सेनापथकका कार्य क्या था ?
४ अपव्रत तमसास्त्र से क्या होता था ?
५ वैदिक राज्यव्यवस्थामें सैन्यके विषयमें कौनसी बात विशेषरूपसे कही है ?
६ युद्धकी संभावना किस कारण होती है ?
७ युद्धकी संभावना होनेपर प्रजाका तथा शासकोंका क्या कर्तव्य होता है ?
८ अपना बल बढानेके विषयमें वेदमन्त्रोंमें क्या उपदेश कहा है ?
९ युद्धमें कुशलता बतानेके विषयमें क्या कहा है ?
१० सब सैनिक समान हैं इस विषयका वेदमन्त्रका उपदेश किस मन्त्रमें कहा है ? और उसका भाव क्या है ?
११ सब सैनिक समान न माने जांय तो क्या होगा ?
१२ अनुशासनशील सेनासे क्या लाभ होते हैं ?
१३ अनुशासन सेनामें न रहा तो क्या हानि होनेकी सम्भावना है ?
१४ सेनामें भरती करनेके लिये वेदमंत्रोंमें कौनसे गुण आवश्यक माने हैं ?
१५ सब सैनिक एक बडे घरमें रहते थे इसको बतानेवाला वेदमन्त्र कौनसा है ?
१६ एक घरमें रहनेसे लाभ कौनसा है और पृथक् पृथक् घरोंमें सैनिक रहे तो हानि कौनसी होनेकी सम्भावना है ?
१७ सैनिकोंके लिये खेलोंमें प्रवीण रहनेकी आवश्यकता क्यों मानी गयी थी ?
१८ वेदमन्त्रोंमें कहे सैनिकोंके शस्त्र, अस्त्र, वेशभूषण, आयुध आदिकोंके कौनसे नाम वेदमें कहे हैं ? उनका स्वरूप क्या है ?
१९ सिरसे लेकर पैरतक सैनिक जो पहनते थे उनके नाम क्या हैं ?
२० ' मरुत् ' पदके अर्थ जितने हैं वे सब बताइये ?
२१ मरुतोंके पास जो काटनेवाले भयानक शस्त्र रहते थे उनके वर्णन करके बताइये कि उनके स्वरूप कैसे थे ?